चिरन्तन Chirantan
ANCIENT WISDOM, GLOBAL REACH

Digi Access

Article ID: CHI-2026-0012

DOCUMENTATION & EXPOSITION

विलुप्त होती एक और सरस्वती

Another Vanishing Sarasvatī: proverbs from the villages of the Satpura hills

अवधेश तिवारी (Awdhesh Tiwari)

Retired Senior Announcer, All India Radio (Akashvani)

Editorial queries: admin@chirantanjournal.in

Received: 10 September 2026 · Accepted: 19 September 2026

ABSTRACT

सतपुड़ा-अंचल के ग्राम्य जीवन में बड़े बूढ़ों के मुँह से सदियों पुरानी विलुप्तप्राय कहावतें आज भी कभी-कभी सुनाई पड़ जाती हैं। ये कहावतें मिट्टी में गड़ी हुई सोने की मुहरों की तरह हैं, जिनमें धर्म, सदाचार, नीति, सामाजिक सद्भाव, सामाजिक वर्जनाएँआदि का अपनी बोली में अत्यंत सुंदर चित्रण है। विशेष बात यह है कि ठेठ देहात के बूढ़े अनपढ़ जनों पास ये कोष अधिक सुरक्षित मिलता है। इनमें अभिधा, लक्षणा और व्यंजना- तीनों शब्द शक्तियों का प्रयोग है। ये ओज, माधुर्य और प्रसाद गुणों से ओतप्रोत हैं तथा रूपक, यमक, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों का हृदयग्राही उपयोग देखने को मिलता है। सबसे बड़ी बात जो बातें इनमें कही गई हैं उनके लिए बिम्ब भी ग्राम्य जीवन से ही लिए गए हैं। पढ़कर आश्चर्य होता है कि वज्र देहात के अनपढ़ कहे जाने वाले समाज के पास चिंतन की ऐसी गहरी पैठ कैसे संभव हुई होगी! ये कहावतें लोकजीवन की आचार-पद्धति तथा उनके संस्कारों का एक हिस्सा रही हैं। संरक्षण के अभाव में अब ये धीरे-धीरे विलुप्त होती जा रही हैं।

KEYWORDS

विलुप्तप्राय कहावतें; ग्राम्य जीवन; आचार-पद्धति

ABSTRACT IN ENGLISH

In the village life of the Satpura region, centuries-old proverbs on the verge of extinction can still occasionally be heard from the mouths of the elderly - like gold coins buried in the soil, offering, in their own dialect, an exceptionally beautiful portrayal of dharma, righteous conduct, ethics, social harmony and social taboos. Notably, this treasury survives most intact among the illiterate elders of the deep countryside. These proverbs employ all three powers of word-meaning recognised in Sanskrit poetics - abhidhā (literal sense), lakṣaṇā (indicative sense) and vyañjanā (suggested sense) - and are steeped in the poetic qualities of ojas (vigour), mādhurya (sweetness) and prasāda (lucidity), with a moving use of figures of speech such as metaphor, punning and poetic fancy. Most striking of all, the imagery in these sayings is drawn entirely from village life itself. It is astonishing, on reading them, how such profound reflection could have arisen among a society dismissed as illiterate rural folk. These proverbs have long formed part of the customary practices and rites of village life. In the absence of any effort at preservation, they are now gradually disappearing.

मध्यप्रदेश में सतपुड़ा-अञ्चल के अंतर्गत आदिवासी-बहुल क्षेत्र में छोटे-बड़े हज़ारों गाँव बसे हुए हैं। इस अञ्चल में गौंडी, मराठी, पवारी और बुंदेली जैसी अनेक बोलियों के सम्मिश्रण से निर्मित सुंदर सांस्कृतिक परंपरा प्रवहमान रही है, जिसमें तरह-तरह की कहावतों और सूक्तियों का अनूठा प्रयोग बहुत ही रोचक और हृदयग्राही रूप में मिलता है। इस अञ्चल में सदियों से प्रचलित इन कहावतों की अपनी कुछ अलग विशेषताएँ हैं। इनका लिखित रूप भले ही सुलभ न हो किंतु ये अपनी वाचिक परंपरा में सदियों से समाज में प्रचलित रही हैं और गाँव के निरक्षर लोगों की स्मृतियों में इनका एक बड़ा कोष सुरक्षित मिलता है। ये गाँव की अपभ्रंश बोली में उन ठेठ शब्दों में अभिव्यक्त होती हैं, जो अब विलुप्तप्राय हो रहे हैं। इन कहावतों के रूप में गाँव की माटी में हमारी वैचारिक परंपराओं की कुछ ऐसी अमूल्य निधियाँ बिखरी पड़ी हैं, जिन्हें पाकर अनचाहे ही हम मालामाल हो जाते हैं। हमारी ये प्राचीन कहावतें हमारी ऐसी पूँजी हैं, जिनमें सदियों से संचित अनुभव और ज्ञान का अक्षय-कोष तो है ही, इन कहावतों में स्थानीय बिम्बों के माध्यम से धर्म, नीति और सदाचार की जो सुंदर शिक्षाएँ दी गई हैं, वो भी देखते ही बनती हैं। इन कहावतों में दैनिक जीवन की सीखें हैं, सदाचार की प्रेरणाएँ हैं, मानव-जीवन को सुखी बनाने के दिशा-निर्देश हैं तथा वह सब कुछ है जिसकी मनुष्य को हर युग में आवश्यकता रही है। दूसरे शब्दों में इन कहावतों में ग्राम्य भाषा में ऐसा कालजयी चिंतन है, जो कलापक्ष और भावपक्ष- दोनों की कसौटी पर बेजोड़ सिद्ध होता है। रूपक, उपमा, श्लेष, यमक, उत्प्रेक्षा, अनुप्रास, दृष्टांत आदि अलंकारों का इनमें बड़ा हृदयग्राही प्रयोग है। ये कहावतें गाँव की माटी में गड़ी हुई सोने की मुहरें हैं। ये अतीत का दस्तावेज़ भी हैं और भविष्य की धरोहर भी। ये कहीं

दोहों के रूप में तो कहीं बड़े अनगढ़ रूप में प्राप्त होती हैं। हमने ऐसी अनूठी कहावतों और सूक्तियों का गाँव-गाँव जाकर लोगों से बातचीत करके संग्रह किया और उन्हें दोहों के रूप में सुरक्षित रखने की कोशिश की है। आइए इनकी कुछ बानगी देखें।

धन मनुष्य के जीवन की प्राथमिक आवश्यकता है लेकिन एक प्राचीन कहावत कहती है कि धन का संग्रह भी संयम से ही होना चाहिए क्योंकि जिस तरह नदी में बाढ़ आने से पानी गंदा हो जाता है उसी तरह घर में बेतहाशा बढ़ता हुआ धन अनागत विपत्ति की सूचना लेकर आता है-

जब घरमें संपत्ति बढ़े, सन्मति होवे दूर।

कँदलो पानी हो गओ(कि) नद्दी आ गई पूर॥

एक और कहावत में धन को 'गुलतर्रा का फूल' कहा गया है। गुलतर्रा, गुलमोहर की प्रजाति का फूल है, जो किसी विशेष मौसम में कुछ दिनों के लिए अपनी रौनक़ बिखेरकर नष्ट हो जाता है-

मूरख खे धन का मिलो, मूरख गओ जो भूल ।

दो दिन में झर जात हैं, गुलतर्रा के फूल॥

अब एक और बानगी देखिए। एक कहावत हमें बताती है कि मनुष्य को मूर्ख व्यक्ति की तरह किए जाने वाले अनुत्पादक श्रम से बचना चाहिए। मूर्ख गाय और भैंस पालकर उन्हें सानी तो बहुत खिलाता है लेकिन दूध चलनी में दुह लेता है-

गैया-भैंसी पाल खे, खूब खवाए बाँट।

फिर चलनी में दुह लए, फूकट की पिचकाट॥

एक और कहावत में धन की उपयोगिता को स्वीकार करते हुए ये चेतावनी भी दी गई है कि यदि सद्बुद्धि न हो तो मनुष्य थोड़ा-सा धन पाकर भी अहंकारी हो जाता है और फिर उसी तरह निरर्थक उछल-कूद करने लगता है जैसे आषाढ़ की प्रथम वर्षा होते ही मेंढक उछलने लगते हैं-

तन्नक सो पैसा मिलो (कि) खोदन लगे पहाड़।

उचटन लागे मेंदरा, जैसई आओ असाड़॥

इसी तरह एक और सूक्ति है, जो कहती है कि यदि तुम समुद्र के किनारे जाकर खड़े भी हो जाओगे तो भी उससे उतना ही ले सकते हो जितना बड़ा तुम्हारा पात्र होगा, अर्थात बड़ों से कुछ प्राप्त करना हो तो उन्हें दोष मत दो, अपना पात्र बड़ा करो। इसी पात्र से पात्रता शब्द बना है । जैसे-जैसे पात्रता आती है वैसे-वैसे अपना प्राप्य हमें स्वयं मिलता चला जाता है। जिस दिन पात्रता पूरी होती है स्वयं ईश्वर भी हमारे द्वार पर चल कर पहुँच जाते हैं-

किस्मत ठाड़ी कर देहे, तेहे समंदर पास।

तो भी तू उत्तई लेहे, जित्ती बड़ी गिलास॥

मनुष्य स्वयं ईश्वर का अंश है। जिस तरह मिट्टी के एक ढेले को जानकर संपूर्ण पृथ्वी को जाना जा सकता है, उसी तरह एक जीवन को समझ कर जीवन के रचनाकार परमात्मा तक पहुँचा जा सकता है। हम अमृतपुत्र हैं। मृत्यु हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकती-

हम पता उस झाड़ के, जो दिन-दिन हरियाय।

जिसकी जड़ पाताल में, उसको कौन सुखाय।

विज्ञान कहता है कि किसी भी पदार्थ को नष्ट नहीं किया जा सकता, हाँ, उसका रूप अवश्य बदला जा सकता है। याद रखो, तुम्हें भी कोई कभी नष्ट नहीं कर सकता। तुम परमात्मा की अमृत-संतान हो। मृत्यु तुम्हारा रूप बदल सकती है, तुम्हें नष्ट नहीं कर सकती। तुम अनंत जीवन के हिस्सेदार हो। ठीक उसी तरह जैसे जब हम साजे थे तो चना कहलाते थे, फूट गए तो दाल बन गए, पिस के बेसन कहलाने लगे और जल गए तो खार (क्षार) हो गए। लेकिन हमें कभी कोई नष्ट नहीं कर पाया-

साजे हैं तो हैं चना, फूट गए तो दार।

पिस गए तो बेसन बने, जल गए तो भए खार ॥

एक सूक्ति में कायर और कामचोर लोगों को फटकार देते हुए उनकी भर्त्सना की गई है। सूक्ति में कहा गया है कि जो कर्मठ होते हैं वे सत्तर की उम्र में भी जवान होते हैं और जो कायर होते हैं वे जवानी में ही बूढ़े हो जाते हैं। काम करने के भी सौ बहाने हैं और न करने के भी सौ बहाने हैं-

किसम किसम के मिल जेहें तुम्हें हिंया इंसान।

इक बुढ़यानो बीस में, इक सत्तर में ज्वान॥

एक और कहावत है, कई बार कितना भी प्रयास करो हानि और लाभ बराबर रहते हैं। हमने भेड़ पाली, यह सोच कर कि भेड़ से ऊन मिलेगा और इस साल पूस का ठंडा महीना आराम से कट जाएगा। लेकिन हाय! भेड़ ने ऊन तो दिया किंतु हमारे खेत में लगी कपास की सारी फसल चर डाली-

गाडर पाले सोच खे (कि) पूस कठे बिंदास।

गाडर ने दई ऊन, पर चर गई खड़ो कपास॥

एक और कहावत है, जिसमें आज की शिक्षा-व्यवस्था पर तीखा व्यंग्य किया गया है। शिक्षा इतनी महँगी है कि बच्चों को पढ़ाने के लिए किसान को अपनी भैंस बेच देनी पड़ती है, लेकिन पढ़ने के बाद जब कुछ हाथ नहीं लगता तो फिर से भैंस ख़रीद कर पढ़ा-लिखा नौजवान दूध बेचने लगता है। यह कहावत प्रश्न पूछती है, बोलो, अकल बड़ी या भैंस?

भैंस बेच खे हम पढ़े, पढ़ खे फिर लये भैंस।

अकल बड़ी या भैंस रे, ओ गोबरगन्नेस॥

इन कहावतों में जीवन के विविध प्रसंग बड़ी सजीवता के साथ मिलते हैं। सामाजिक संबंधों में परस्पर हास-परिहास की ही बात लें तो कहीं-कहीं विनोदप्रियता की ऐसी हृदयग्राही अभिव्यंजना मिलती है कि मन बाग-बाग हो जाता है, जैसे फड़कुल एक पक्षी का स्थानीय नाम है। कवि- कल्पना से जुड़ी एक किंवदन्ती है कि कोयल और फड़कुल जब एक साथ मिलती हैं तो पहले आपस में चोंच लड़ाती हैं और फिर लड़ने लगती हैं, इसलिए इन्हें ननद और भौजाई की उपमा दी जाती है। इसी प्रकार जब गधा और घोड़ा आपस में मिलते हैं तो सामाजिक संबंधों की ऐसी गुदगुदाने वाली अभिव्यंजना सामने आती है कि देखते ही बनता है। ज़रा यह उदाहरण देखिए-

कोयल से फड़कुल मिली (तो) मिल गई नंद-भुजाई।

गधा और घोड़ा मिले (तो) मिल गए साड़ू-भाई॥

इन कहावतों उपमेय और उपमान की अद्भुत संकल्पना भी कहीं-कहीं देखने को मिलती है। कभी-कभी तो ये बहुत ही हृदयग्राही प्रतीत होता है। क्या कभी हम यह सोच सकते हैं कि बरबटी नाम की साधारण-सी सब्ज़ी भी किसी गंभीर अर्थ की द्योतक हो सकती है? बरबटी में लचीलापन होता है, उसकी सब्ज़ी भी बनाई जा सकती है और दाल भी, यानी उसमें परिस्थितियों के अनुरूप ढलने का गुण विद्यमान होता है। बरबटी के इन्हीं गुणों को प्रतीक बनाकर एक भक्त भगवान से पूर्ण समर्पण-भाव से कहता है-

चाहे जैसो तू नचा, हम सबमें तैयार।

हम तो बन गए बरबटी, साग बना या दार॥

अब एक और चित्र देखिये- गाँव के सभी आमंत्रित-जन एक साथ पंगत में बैठकर पत्तल में भोजन कर रहे हैं। पत्तल के साथ दोना न होने से पतली दाल बाहर बहती जा रही है। यहाँ शिष्टाचारवश ये कोई नहीं कह रहा है कि दाल पतली है, बल्कि उसकी अभिव्यंजना करके कहा जा रहा है कि दाल 'पल्लई भग रही है।' (यहाँ तेमन शब्द का अर्थ सब्जी से है)-

पंगत में परसे पुड़ी, तेमन और अचार।

दोना नई थो साथ में (तो) पल्लई भग गई दार॥

मनुष्य को सुख-दु:ख कर्म से मिलते हैं या भाग्य से? इस प्रश्न के उत्तर में कभी कर्म को भाग्य से प्रबल बताया गया है तो कभी भाग्य से कर्म को अधिक निर्णायक माना गया है। आचार्य चाणक्य कहते हैं- 'भाग्यं फलति सर्वत्र न च विद्या न पौरुषम्' - अर्थात भाग्य के विधान के सामने विद्या और पौरुष निस्तेज हो जाते हैं। भाग्यवान को अकारण बहुत-से सुख प्राप्त होते हैं। एक कहावत कहती है कि बिल्ली कभी गाय, बकरी, भैंस नहीं पालती लेकिन जीवन भर दूध पी-पीकर मोटी होती रहती है। यह भाग्य का विधान नहीं तो और क्या है?

बिलिया न पाले कभी छेरी, भैंसी, गाय।

मगर भाग इत्ते बड़े(कि) पी-पी दूध मुटाय॥

यह सूक्ति कहती है- सींग बढ़ाओगे तो संसार तुम्हें मरखा कहेगा। सींग कटाओगे तो तुम्हें गधा कहने लगेगा। इसलिए संसार की चिंता छोड़ो तथा स्वविवेक काम करो। संसार का तो काम ही है, कुछ-न-कुछ कहना-

सींग बढ़ाहो तो कहे मरखा जो संसार।

सींग कटाहो तो कहे, आ गओ गधा गमार॥

वाणी का आभूषण सबसे बड़ा आभूषण है, वाग्भूषणं भूषणम्। मनुष्य की पहचान उसकी वाणी से ही तो होती है। कोयल और कौवे में आख़िर क्या अंतर है? वाणी का ही तो है! इसलिए मनुष्य को चाहिए कि वह तौल के बोले क्योंकि उसका हर बोल अनमोल है-

तौल-तौल खे बोल रे, बोल तेरे अनमोल।

बिन तौले बोलो कधी, तो सब माटी मोल॥

जो गरजते हैं वे बरसते नहीं। ज़ोर से भौंकने वाला कुत्ता प्रायः काटने से डरता है। इस बात को कितने सुंदर ढंग से इस कहावत में पिरोया गया है-

गरजन वारे मेघ से नई बरसे जलधार।

भूँकन वारो कूकरो कभी न चाबे यार॥

जवानी जाकर नहीं आती और बुढ़ापा आकर नहीं जाता, संसार का यही सत्य है। इन्हीं विचारों पर केंद्रित ये सूक्ति देखिए-

कहे जवानी जग ओहे, जो जा खे नई आय।

कहे बुढ़ापा जग ओहे, जो आ खे नई जाय॥

मनुष्य की तरह सभी प्राणी अपने स्वभाव के अनुरूप अपने सजातीय प्राणियों के साथ रहना चाहते हैं। बकरी को बकरी का साथ अच्छा लगता है। चूहा, चूहों के समूह में रहता है। चिड़िया, चिड़िया के साथ सहज भाव से रह लेती है और घूँस, घूँस के साथ चली जाती है। अपना समूह और स्वभाव कोई नहीं छोड़ना चाहता-

छेरी से छेरी मिले, मिले मूस से मूस।

फड़कुल से फड़कुल मिले, मिले घूँस से घूँस॥

अगली कहावत मनुष्य को पुरुषार्थ के लिए प्रेरित करती है। हमारा अतीत यदि स्वर्णिम था तो हम इस पर गर्व करके कब तक बैठे रहेंगे? हमें स्वयं भी तो कोई पुरुषार्थ करके दिखाना होगा ना! जिनकी विरासत महान होती है उनके कर्म भी महान होने चाहिए-

स्यानेन को धन मिल गऔ तो कर रए ऊँची बात।

घी दद्दा ने खाए थे, सूँघों मेरो हाथ॥

कुछ लोग अपने मुँह से अपनी ही बड़ाई करने में दक्ष रहते हैं। जैसे पत्थर की सिल में मसाला पीसने वाला बट्टा (लोढ़ा) स्वयं को शिवजी का भाई कहने लगता है-

ओछे अपने मुँहो से, अपनिच करें बड़ाई।

सिल को लोढ़ा कह रहो, हम शिवजी के भाई॥

मनुष्य के जन्मजात संस्कार उसके स्वभाव के हिस्से होते हैं और वे जब-तब उसके व्यवहारों में प्रकट होते रहते हैं । जैसे चकमक को पाँच पुरुष गहरे जल में फेंक दो फिर भी उसके अंदर की आग ज्यों-की-त्यों बनी रहती है-

जनमजात गुन जाय ना, जी से कित्तई भाग।

पाँच पुरस जल में रहे, ज्यों चकमक में आग॥

सावन-भादों की मूसलाधार वर्षा से नदियों में भयानक बाढ़ आ जाती है। साधारण बाढ़ में तो ग्रामीण चरवाहे अपनी भैंस की पूँछ पकड़कर नदी पार कर लेते हैं किंतु भादों की बरसात में यह संभव नहीं होता। इसका प्रतीकार्थ है कि छोटे साधनों से बड़ी सफलता प्राप्त करना कठिन होता है। यह कहावत परलोक-यात्रा की ओर भी निर्देशन करते हुए कहती है कि मृतात्मा को, गाय की पूँछ पकड़कर जो वैतरणी पार करनी पड़ती है, वह छोटे पुण्य-बल से संभव नहीं होती। अतः और अच्छे काम करो ताकि बड़े पुण्यों का संग्रह हो सके-

भादों की बरसात है, तेज नदी की धार ।

पूँछ पकड़ खे बैल की, कैसे उतर् हो पार॥

जो वस्तु हमें प्रिय लगती है उसका बोझ हमें कभी महसूस नहीं होता, जैसे हाथी को अपनी सूँड़ और भैंस को अपना सर कभी भारी नहीं लगते । एक माँ अपने बच्चे को गोद में लेकर बिना थके पहाड़ पर चढ़ जाती है। सच तो यह है कि प्रेम जितना बढ़ता जाता है, वज़न उतना ही घटता चला जाता है -

हत्ती खे भारी नहीं है हत्ती की सूँड़।

भैंसी खे भारी नहीं है भैंसी की मूड़॥

अगली कहावत कहती है, बिना श्रम के यदि अर्थ-लाभ होता है तो वह अर्थनाश का कारण बनता है। अतः जहाँ भी बिना अधिकार या परिश्रम के धन प्राप्त हो, उसे लुटा देना चाहिए जैसे तूफान में पेड़ से गिरे हुए आम को लोग बिना कहे बीन-बीन कर ले जाते हैं-

फिरी फुकट को धन मिलो तो सबखे खूब लुटाव।

जे मटिया के आम हैं, बीन-बीन ले जाव॥

यह सूक्ति कहती है, दुनिया में ऐसे नमकहरामों की कमी नहीं, जिनसे यदि काम करवाना हो तो उन्हें चाँदी का जूता मारना पड़ता है, अर्थात उत्कोच (घूस) देना पड़ता है। ऐसे लोग समाज और देश के दुश्मन होते हैं। यहाँ मखमली मार देकर घूसखोरों को अपमानित किया गया है-

दुनिया में तुमखे मिल्हें, ऐसे नमक हराम।

चाँदी को जूता पर् हे जभई कर् हें वे काम॥

कर्म की गति बड़ी रहस्यमय है- कभी निरंतर कर्म करने से भी फल नहीं मिलता, तो कभी कर्मफल तुरंत कुछ इस तरह प्राप्त हो जाता है जैसे किसी ने सुबह आम का पेड़ लगाया और शाम होते-होते उसमें मीठे फल लग गए हों। सत्कर्म एक ऐसा ही पेड़ है, जिसे सुबह रोपा जाए तो आत्म- संतोष रूपी फल तुरंत प्राप्त हो जाता है-

सत्कर्मन को देख लो ऐसो गजब प्रभाव।

सुबे लगाओ आम और संजा खे फल खाव॥

जो लोग बुढ़ापे में भी सज-धज कर शान-शौकत से रहते हैं, इत्र फुलेल लगाते हैं, इस कहावत में ग्राम्यजन मनोविनोद के लिए उन पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं कि बूढ़ा बैल अपने सींग कटवा कर जवान बछड़ा बनना चाहता है-

उमर पछत्तर की मगर लग रओ तेल-फुलेल ।

सींग काट बच्छा बनो, देखो बूढ़ो बैल॥

इस कहावत में कहा गया है कि शादी-ब्याह होने के बाद ही मनुष्य को गृहस्थी की समस्याओं से जुड़ी कड़वी सच्चाई का अनुभव होता है। विवाह गुड्डे-गुड़िया की तरह घरघूले का खेल नहीं है। वास्तव में परिवार बनने के बाद नून-तेल की चिंता में आदमी का तेल बगर जाता है-

नून-तेल के सोच में, बगर जेहे सब तेल।

अरे ब्याह नइहा बिटा! घरघूला को खेल॥

इसी आशय एक कहावत और देखिए-

पड़ी भाँवरे तब हमें पता चलो जो यार।

कौन भाव है गोंदरी, कौन भाव है दार॥

यानी जब ब्याह हुआ तभी पता चला कि प्याज़ का भाव क्या है और दाल का भाव क्या है?

आइये,अब अगली सूक्ति की ओर बढ़ें। खेती की कमाई सबसे पवित्र होती है। एक-एक दाना ईश्वर की कृपा से प्राप्त होता है इसीलिए 'उत्तम खेती मध्यम बान' वाली कहावत प्रचलित है-

खेती माता से मिली ऐसी शुद्ध कमाई।

हर दाना-बाली इमे, प्रभु किरपा से आई॥

अगली सूक्ति कहती है, जो संसार में सबसे विनम्र भाव से हाथ जोड़कर मिलता है वह सबका आशीष प्राप्त करके आयुष्मान् होता है। इसके विपरीत जो अकारण दूसरों का अपमान करता है उसकी आयु दिनों-दिन क्षीण होती जाती है। ऐसा मनुष्य मृत्यु के वश में माना जाता है-

जो जग में सबसे मिले,सदा दोई कर जोर।

सबके आसिरवाद से जीवे बरस करोर।

जो जग में सबको करे,बिन कारन अपमान।

आयु छीन हो, मौत के बस में उसको जान॥

आइये, अब अगली सूक्ति की ओर चलें। इस सूक्ति का भावार्थ है, हवा, दवा, घोड़ा, वाणी, पानी और मृदंग जब जैसा साथ पाते हैं तब उसकी पात्रता के अनुसार वैसा ही रंग बदल देते हैं-

हवा, दवा, पानी तुरग, बानी और मृदंग।

जब जैसो सँग पाँय जे, बदलें औंसईं रंग॥

एक बड़ी सुंदर कहावत है कि किसी के घर का कचरा देखकर तुम उसकी हैसियत का पता लगा सकते हो-

घर के कचरा की तुम्हें मालूम नहीं बिसात।

घर को कचरा कह देहे, घर की सब औकात॥

इन कहावतों में जीवन के हर पक्ष को छुआ गया है, चाहे वह बाह्य जीवन से जुड़ा हो या मनुष्य की आंतरिक प्रकृति से। एक कहावत में कहा गया है कि चिंता रूपी सर्पिणी मनुष्य के शरीर में अपना घर बनाकर ऐसा विष फैलाती है कि फिर भले ही आदमी दिन भर बकरी की तरह खाता रहे तो भी दुर्बल होता चला जाता है-

चिंता साँपन बैठ खे, ऐसो विष बगराय।

अदमी छेरी सो चरे, तऊ दिन-दिन दुबराय॥

कर्महीन का साथ उसका भाग्य भी नहीं देता- यदि कर्महीन कभी कुछ करता भी है तो भी विपत्तियाँ उसे चारों ओर से अकारण ही घेर लेती हैं। या तो फ़सल में कीड़े लग जाते हैं, या बीच में ही बैल मर जाता है, या ओले पड़ जाते हैं या बिना किसी स्पष्ट कारण के फ़सल स्वयं सूख जाती है-

करमहीन खेती करे, तो चिड्डा चर जाय।

बैल मरे, फतरा गिरे, या आपइ मुरझाय॥

सुखी व्यक्ति का साथ तो सब देते हैं पर दु:खी का साथ देने कोई आगे नहीं आता। यहाँ तक कि प्रकृति भी उससे असहयोग करती है। जब दुखिया रोज़ा रखता है तो दिन भी बड़े-बड़े होने लगते हैं-

दुखिया के नाने हियाँ, कोई रोय न धोय।

जब दुखिया रोज़ा रखे, बड़ो-बड़ो दिन होय॥

सब की शोभा अपने-अपने स्थान पर रहने से ही होती है; न पानी में पूड़ी सिक सकती है, न गधा कभी हल में जोता जा सकता है-

पानी में पूरी सिके, (तो) काहे तेल-फुलेल।

गधा कभी हर में जुते (तो) कौन बिसाए बैल॥

हिकमत के हल में पुरुषार्थ के बैल जोतकर कर्म की खेती करो तो मुक्ति का मार्ग सहज ही मिल जाएगा। इस कहावत में यही सुंदर जीवन-दर्शन है-

हिकमत के हर में जुतें, पुरसारथ के बैल।

कर्मन की खेती पकी, मिली मुक्ति की गैल॥

कहते हैं न, एक दिन घूरे के भी दिन फिरते हैं। घूरा जब तक बाड़ी में पड़ा है तब तक केवल घूरा है, लेकिन जैसे ही खेत में पहुँचता है, सोना बन जाता है। स्थान बदलने से उसका भाग्य भी बदल जाता है -

घूरो बाड़ी में पड़ो तो घूरो कहलाय।

जैसई पहुँचो खेत में तो सोना बन जाय॥

हमारे पास पुस्तकीय ज्ञान बहुत हो सकता है किंतु हमारे बड़े-बूढ़ों के पास अनुभव का ज्ञान होता है। बड़े-बूढ़े पाठशाला में भले ही न गए हों पर चूँकि वे जीवन की पाठशाला में पढ़े हैं अतः हमसे अधिक व्यावहारिक होते हैं। एक कहावत कहती है कि भले ही तुम पढ़-पढ़ के जग-विख्यात हो गए हो, लेकिन फिर भी सफल होने के लिए अपनी अनपढ़ आजी बऊ के पास बैठकर उनकी बात सुन लिया करो-

पढ़-पढ़ खे ज्ञानी भये, हो गए जग विख्यात।

कभी-कभी सुन लए करो, आजी बऊ की बात॥

संसार में तीन तरह के लोग हैं- उत्तम, मध्यम और अधम। अधम व्यक्ति केवल धन चाहता है, मध्यम चरित्र के लोग धन और मान दोनों चाहते हैं किंतु उत्तम चरित्र के पुरुष अपने आत्म सम्मान के लिए सर्वस्व त्याग देते हैं-

अधम हियाँ बस धन चहे, मध्यम धन और मान।

उत्तम सर्वस त्याग खे, चहे मान को पान॥

जहाँ इशारों से काम हो, वहाँ तीर चलाने की क्या जरूरत? कोई गुड़ खिलाने से ही मर जाए तो विष खिलाने की क्या आवश्यकता? अर्थात् आसानी से काम हो तो कठिन मार्ग चुनने की ज़रूरत नहीं पड़ती-

तुक्का मारे काम हो (तो) काहे तीर चलाव?

गुड़ से कोई मर जाए तो काहे जहर पियाव??

संसार में यह कैसी विडंबना है ! एक भूखे पेट मरता है और एक ख़ूब खा कर मर जाता है-

एक हतो कंगाल और इक थो धन्ना सेठ।

एक अजीरन से मरो, और एक निन्ने पेट॥

और अब एक और सूक्ति देखिए, जो कहती है, चाहे तुम सौ-सौ गंडा-ताबीज़ क्यों ना बँधवा लो किंतु सुख की प्राप्ति सत्कर्म और सद्ज्ञान से ही संभव होती है। इसके अलावा सुख का और कोई सुगम मार्ग नहीं है-

सौ-सौ बँधवा लेव तुम, गंडा और ताबीज़।

सुख की बस दो राह हैं, करम और तजबीज॥

गाँव के लोगों में सौंदर्य-चेतना कितनी गहरी होती है, इस कहावत में देखने को मिलता है। नायिका इतनी सुंदर तथा सुकोमल है कि उसे देखकर ही जुनून-सा चढ़ जाता है। ऐसा लगता है यदि एक सींक से भी उसे छू दिया जाए तो ख़ून छलछला पड़ेगा-

ऐसी खपसूरत लगे (कि) देखत चढ़े जुनून।

एक सींक से छी देहो (तो) निकर पर्हे रे खून॥

चाहे कुटे को कूट लो या पिसे को पीस लो; चाहे इस तरह के और भी छत्तीस उपाय क्यों न कर लो, फिर भी तुम्हें उतना ही मिलेगा जितना तुम्हारे भाग्य में होगा। भाग्य से अधिक और समय से पहले मनुष्य को कभी कुछ प्राप्त नहीं होता-

जित्तो हक उत्तई मिल्हे, हिकमत कर छत्तीस।

भलई कुटे खे कूट ले, भलई पिसे खे पीस॥

अच्छी वाणी के लिए एक सूक्ति देखिये- जो सोच-विचार कर वाणी का उपयोग नहीं करता, उसकी जीभ में जलता हुआ लूघड़ रख देना चाहिए, यानी उसके मुँह में आग लगा देनी चाहिए । विद्वानों का कथन है कि असंयमित वाणी वाला व्यक्ति मृतक की तरह होता है, मृतक को भी सबसे पहले मुखाग्नि ही दी जाती है-

जो मुँह से बोले नहीं, बानी सोच विचार।

धर दो उनकी जीभ में, जरो लूघरा यार॥

अगली सूक्ति में एक बहुत अच्छी बात कही गई है कि मनुष्य को प्रतिदिन सुबह से शाम तक एक छोटी- सी 'बिगार' अवश्य करनी चाहिए। 'बिगार' यानी कोई ऐसा काम, जिससे दूसरों की सेवा हो और उसमें हमारा कोई स्वार्थ न हो। भले वह काम बहुत छोटा क्यों न हो पर वही धीरे-धीरे हमारी पहचान बन जाता है और हमारे पास थोड़ा-थोड़ा करके पुण्य का ढेर एकत्र हो जाता है-

दिन्निकरे से साँझ तक, दिन में बस इक बार।

छोटी सी करियो मगर, करियो एक बिगार॥

अगली सूक्ति बहुत मज़ेदार है। जो व्यक्ति लगातार कारण झूठ बोलता है, वह झूठ में इतना रच-बस जाता है कि फिर यदि सच बोलना भी चाहे तो उसकी जीभ नहीं मुड़ती यानी जीभ से सत्य का उच्चारण ही नहीं हो पाता-

झूठ बोल खे रात-दिन, ऐसे भरे नसीब।

(अब) सच्ची बोलन चात हैं, पर मुरकेई नइ जीब॥

इस सूक्ति का सार है, जो ज्ञानी होकर भी ज्ञान का दान नहीं करता ऐसे ज्ञानी के ज्ञान से, मूर्ख का अज्ञान, अधिक श्रेष्ठ होता है अर्थात हमारे पास यदि ईश्वर की दी हुई ज्ञान, धन आदि की संपदा है तो उसका एक भाग हमें दूसरों की सेवा में लगाना चाहिए-

ज्ञानी हो के न करे कभी ज्ञान को दान।

उके ज्ञान से है भलो, मूरख को अज्ञान॥

इसी आशय की एक कहावत और देखिए, मक्खीचूस के घर में अन्न-धन का भंडार है पर बिना दान के ऐसे धन को बार-बार धिक्कार है। ऐसा धन स्वयं के लिए भी कल्याणकारी नहीं हो सकता-

घर में माखीचूस के अन-धन को भंडार।

बिना दान भंडार खे बीस बार धिक्कार॥

अगली कहावत में अपनी जड़ों से जुड़कर रहने की सीख है। पंछी अपने पंख खोलकर आकाश में कितना भी क्यों न उड़े, उसे पेट भरने के लिए दाना धरती माँ की गोद में ही मिलेगा, अतः आकाश में उड़ते समय अपनी धरती को नहीं भूलना चाहिए-

पंछी तू कित्तई उड़े, पंखा खोल अकास।

मगर तेहे चुग्गा मिल्हे, धरतिच माँ के पास॥

यदि मन में मिठास हो तो रौनक और बरकत स्वयं दौड़-दौड़ कर हमारे पास आती हैं। यहाँ तक कि हमारे आँगन में लगे हुए फल भी अधिक मीठे पकने लगते हैं। कहते हैं, अच्छे राजा के राज्य में पूरी रियासत के फल मीठे हो जाते हैं-

मन मीठो तो दौड़ खे, रौनक- बरकत आँय।

उनके अँगना में लगे, फल भी खूब मिठाँय॥

दूसरों के सामने हाथ फैलाने और दीन-हीन बनकर दाँत निपोरने से ज़्यादा अच्छा है, कि अपने घर में चक्की पीसकर स्वाभिमान से जीवन जियो-

कहीं पसारे हाँत और कहीं निपोरे खींस।

इससे तो अच्छो बिटा, घर में चकिया पीस॥

यह सूक्ति किसान के लिए है कि बैल,बीज, बक्खर और बनी (यानी मज़दूरी)- ये चारों चीज़ें उसे अपने पास ही सुरक्षित रखनी चाहिए क्योंकि जब बतर पड़ती है अर्थात बुवाई का समय आता है तब ये चीज़े माँगने से भी कहीं नहीं मिलतीं-

बैल बीज बखर बनी, ये हैं चीज़ें चार।

बतर पड़े तब तुम रखो घर में ही तैयार॥

इस तरह गाँव की उर्वरा धरती की मिट्टी में दबी हुई सोने की मुहरों की तरह ये सूक्तियाँ सर्वत्र बिखरी हुई हैं। आज इनका संरक्षण बहुत आवश्यक है। इनके संरक्षण के लिए नई पीढ़ी के पाठ्यक्रमों में इन्हें जोड़ा जा सकता है, इसके अलावा लोक-भाषा और संस्कृति के क्षेत्र में काम करने वाले लोगों को सम्मानित करके भी संरक्षण का वातावरण तैयार किया जा सकता है। बच्चों को मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा देकर कहावतों और मुहावरों की अंत्याक्षरी प्रतियोगिताएँ भी आयोजित की जा सकती हैं। आज विश्व की दो हज़ार से भी अधिक भाषाएँ और बोलियाँ अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए संघर्ष कर रही हैं। इनमें से कुछ तो ऐसी भी हैं, जिन्हें बोलने वाले मात्र दस-बीस लोग ही शेष बचे हैं। जिस तरह हमारी प्राचीन पौराणिक नदी सरस्वती की धारा पूर्णतया विलुप्त हो चुकी है, उसी तरह ग्राम्य संस्कृति की इस प्राचीन धरोहर पर भी विलुप्त होने का ख़तरा मँडरा रहा है। जब एक भाषा ख़त्म होती है, तो केवल भाषा ही खत्म नहीं होती उसके साथ सभ्यता-संस्कृति, वैचारिक-परंपरा तथा मानवीय-संवेदना के साथ और न जाने हमारी कितनी धरोहरें भी प्राणहीन होने लगती हैं। आज हमें चाहिए कि हम अपने घर में, अपने परिवेश में अपनी बोली का गौरवपूर्वक उपयोग करें और इस विरासत को संरक्षित रखने के प्रयास में अपना बहुमूल्य योगदान दें।

About the author

Awdhesh Tiwari. Awdhesh Tiwari (b. 1959, Chhindwara district, Madhya Pradesh) is a retired Senior Announcer with All India Radio and President of the Chhindwara unit of the Anchalik Sahityakar Parishad. Over four decades he has published a poetry collection, two researched compilations of endangered Satpura-region proverbs and idioms, a short-story collection, and an edited anthology of Satpura poets. He received the Lok Kavi Isuri Puraskar (2018) from the Governor of Madhya Pradesh and has been honoured by All India Radio Port Blair, the Triveni Parishad and the Tagore International Literature Art Festival, among others.

Chirantan 1(1), 2026, 73-79